E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2023; 5(12): 38-39
Received: 09-10-2023
Accepted: 15-11-2023

डॉ0 रामकुमार सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, हेमवती नन्दन बहुगुणा राजकीय पी.जी. कालेज, नैनी, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ0 रामकुमार सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, हेमवती नन्दन बहुगुणा राजकीय पी.जी. कालेज, नैनी, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

सह अस्तित्वः एक दार्शनिक विश्लेषण

डॉ0 रामकुमार सिंह

DOI: https://doi.org/10.33545/27068919.2023.v5.i12a.1089

सारांश
विश्व में कोई भी वस्तु न तो सर्वथा स्वायत्र है और न ही पूर्णतः निरपेक्ष। जड़ व चेतन, वैचारिक व भौतिक में सर्वत्र एक पारस्परिक अन्तर्निभरता विद्यमान है। जगत वस्तुओं का विशृंखल समुच्चय नही बल्कि विविधता में एकता समाहित किये हुए एक सुसम्बद्ध (Systematic) इकाई है। इसी सुसम्बद्धता में ही सह–अस्तित्व के बीज विद्यमान है। इसका तात्पर्य यह है कि अस्तित्व का वैविध्य व वैविध्य का अस्तित्व दोनों अन्योन्याश्रय सम्बन्ध की नीव पर खड़े हैं। स्पष्टतः सह अस्तित्व सह–सम्बद्ध अस्तित्व है।

कुटशब्दः सह–अस्तित्व, अन्योन्याश्रय सम्बन्ध, अन्तर्राष्ट्रीय लोकतंत्र, समानता

प्रस्तावना
सह–अस्तित्व का शाब्दिक अर्थ है– साथ होना। एकाधिक वस्तुओं या विचारों की साथ–साथ विद्यमाता। एक वस्तु दूसरी वस्तु पर, एक जीव दूसरे जीव पर, एक विचार दूसरे विचार पर आश्रित है। अस्तित्व में विद्यमान यह सापेक्षिक अनिवार्यता सह–अस्तित्व की अनिवार्यता को सुनिश्चित कर देती है।
किन्तु निरन्तर विकसित होती मानवीय सभ्यता ने प्रकृति का नियामक बन कर वैश्विक व्यवस्था को पुर्नपरिभाषित हुई। अस्तित्व अपनी प्राकृतिक अनुकूलन की स्वाभाविकता को ग्रीक युग में प्रोटागोरस द्वारा कही गयी उक्ति, 'मनुष्य सभी वस्तुओं का मानदण्ड है (Homo Mensura)। आज तीन सहस्राब्दियों के एतिहासिक विकास में आन्यन्तिक रूप में चरीतार्थ हुई है। आज मानव मूल्यों का ही नहीं, बल्कि तथ्यों व सत्यों का भी निर्धारिक बन चुका है।
सह–अस्तित्व की अवधारणा के अनुरूप संसार में प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक जीव एक विलक्षण विशिष्टता से सम्पन्न है। प्रत्येक पंथ, मन में कुछ न कुछ सत्य का अंश विद्यमान है। हरेक सभ्यता व संस्कृति में कुछ अनूठे मूल्य व रोचक परम्पराएँ विद्यमान है, अतः वैचारिक, जैविक, सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक स्तरों पर सह–अस्तित्व का होना अनिवार्य है जिससे कि जीवन व जगत की विविधता कायम रहे।

सह–अस्तित्व को हम दो रूपों में देख सकते हैं–
प्रथम – व्यापक अर्थ में सह–अस्तित्व का तात्पर्य जीवन के सभी आयामों तथा जगत् के सभी क्षेत्रों में सह–अस्तित्व का आदर्श अपनाने से है। प्राकृतिक क्षेत्र में जैव और स्थलाकृतीय विविधता को बरकरार रखना, आर्थिक क्षेत्र में सार्वजनिक और निजी क्षेत्र को बरकरार रखना अथवा लघु–कुटीर उद्योगों के साथ वृहत् बहुराष्ट्रीय उद्योगों को बनाये रखना, सांस्कृतिक क्षेत्र में विभिन्न भाषाओं, धर्मों, परम्पराओं और संस्कृतियों को अक्षुण्ण रखना, सामाजिक क्षेत्र में विभिन्न वर्गों, जातियों, सम्प्रदायों और नस्लों को स्वतन्त्रता और समानतापूर्वक संवर्द्धन करने देना, राजनीतिक क्षेत्र में विभिन्न दलों को पूर्ण अवसर दिया जाना तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में विभिन्न राष्ट्रों की सम्प्रभुता को बनाये रखना सभी सह–अस्तित्व की अवधारणा के अन्तर्गत आ जाते हैं।

द्वितीय – सीमित अर्थों में सह–अस्तित्व केवल सामाजिक–राजनीतिक सह–अस्तित्व को अभिव्यजित करता है। सामाजिक–राजनीतिक दर्शन में सह–अस्तित्व इसी अर्थ में प्रयुक्त होता है। उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के समापन के बाद आये उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के युग ने अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों को शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व के आधार पर जोड़ना ही आदर्श समझा। पुनः पुरातन सामन्तवादी, राजतन्त्रवादी, धर्मतन्त्रवादी और अपेक्षाकृत आधुनिक समाजवादी प्रशासन प्रणालियों के समापन के बाद प्रबल होकर आई लोकतान्त्रिक प्रणाली ने भी विभिन्न धर्मों, पंथों, नस्लों, जातियों के सह–अस्तित्व को अपना आधारभूत आदर्श बनाया।

स्वतन्त्र भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने भी इसे पंचशील के अन्तर्गत अपनी वैदेशिक नीति का अंग बनाया, जो कालान्तर में सम्पूर्ण विश्व के अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों का मानक बन गया। पंचशील–(1954)

(1) अखण्डता और सम्प्रभुता का सम्मान (2) अनाक्रमण (3) अहस्तक्षेप (4) समानता और पारस्परिक हित (5) शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व

मार्क्स द्वारा प्रतिपादित वर्ग संघर्ष का सिद्धान्त अन्ततः साम्यवाद के समानता पूर्ण सह–अस्तित्व में पर्यवसित होता है।

नेहरूजी ने इसकी अनिवार्यता बताते हुए कहा है–

'मानव–प्रकृति' की सीमाओं या राज नयिकों पर जो तात्कालिक खतरे आ गये हैं उनकी हम उपेक्षा नहीं कर सकते। आज दुनिया जिस स्थिति में है, उसमें हम निश्चयपूर्वक युद्ध की सम्भावना से इनकार भी नहीं कर सकते। दिनोदिन, मेरा यह विश्वास बढ़ता जा रहा है कि जब तक हम राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों में नैतिक नियमों को मान्यता नहीं देते, तब तक दुनिया में दीर्घकालीन शान्ि स्थापित नहीं हो सकेगी। मैं समझता हूँ 'शान्तिपूर्ण सह–अस्तित्व ही अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों का सर्वोच्च नियम होगा।

वस्तुतः पंचशील के जो अन्य चार सिद्धान्त हैं, वे भी शान्तिपर्ण सह–अस्तित्व में ही अन्तर्भूत है। इस सम्बन्ध में सह–अस्तित्व विषयक कुछ स्पष्टीकरण अनिवार्य है–

सर्वप्रथम, सह–अस्तित्व के आदर्श को दो रूपों में देखा जा सकता है– भावात्मक तथा अभावात्मक। अभावात्मक अर्थ में सह–अस्तित्व किसी भी बाह्य हस्तक्षेप का निषेध करता है। अतः इस दृष्टि से सह–अस्तित्व का तात्पर्य यह हुआ कि हस्तक्षेप मुक्त स्वयात्त और तटस्थ सह–अस्तित्व। भावात्मक अर्थ में सह–अस्तित्व का तात्पर्य है सहयोगपूर्ण, अन्योन्याश्रयिक तथा परस्परोकारी सह–अस्तित्व। इस दृष्टि से सह–अस्तित्व में सहयोगार्थ अथवा विकासार्थ हस्तक्षेप स्वीकार्य होता है। किन्तु, सह–अस्तित्व की दोनों अवधारणाओं के अपने गुण–दोष हैं। यदि अभावात्मक अर्थ में सह–अस्तित्व का आदर्श अपनाया जाय, तो वह यथास्थितिवाद और आन्तरिक यदृच्छावाद की भांति व्याख्यायिक किया जा सकता है। आज के वैश्वीकरण और मानवतावादी युग में ऐसी स्थिति वांछनीय नहीं मानी जा सकती। पुनः यदि भावात्मक अर्थ में इस आदर्श को अपनाया जाय तो सहयोग और विकास के बहाने किसी देश या वर्ग की आन्तरिक सम्प्रभुता नष्ट भी की जा सकती है। विकसित देशों द्वारा अविकसित देशों में इस तरह के प्रच्छन्न हस्तक्षेप प्रायः दृष्टि गोचर होते भी रहते हैं।

वास्तव में सह–अस्तित्व की सार्थकता, शान्तिपूर्ण, सहयोगपूर्ण और संवृद्धिपूर्ण सह–अस्तित्व होने में ही है। समानता, स्वतन्त्रता और सम्प्रभुता के समन्वित आदर्शोंसे युक्त यह अवधारणा तभी बल पा सकेगी। अन्यथा समाज में हिंसात्मक, संघर्षपूर्ण और अवनतिपरक सह–अस्तित्व भी सम्भव है।

समय की मांगों और परिस्थितियों के अनुरूप सह–अस्तित्व के आदर्श को अधिक व्यापक किया गया है। इसी अर्थ में सम्पोषणात्मक विकास को अपनाया गया है जिसके अनुसार भविष्य के संसाधनों को नष्ट किये बगैर संसाधनों का उपयोग करना है। सह–अस्तित्व का सतत अस्तित्व बनाने हेतु जैव विविधता संरक्षण और जीमण्डल प्रारक्षित क्षेत्र जैसे प्रयास किये जा रहे हैं।

सह–अस्तित्व का लोकतन्त्र से घनिष्ठ सम्बन्ध को देखते हुए अन्तर्राष्ट्रीय सह–अस्तित्व को अन्तर्राष्ट्रीय लोकतन्त्र की संज्ञा दे सकते हैं क्योंकि प्रत्येक देश का स्वतन्त्र और समान अस्तित्व होता है।

राजनैतिक अवधारणा के रूप में सह–अस्तित्व का प्रयोग भले ही आधुनिक काल में हुआ है किन्तु विभिन्न प्राचीन विचारको व मनीषियों ने ऐसे वैश्विक आदर्श पर विचार अवश्य किया है। भारत में 'वसुधैव कुटुम्बक' की संस्कृति को सदैव से मान्यता मिली रही है।

आधुनिक काल में गांधी व विनोवा भावे ने जिस सर्वोदय की अवधारणा का प्रतिपादन किया वह स्वयं सहयोगपूर्ण सह–अस्तित्व की आदर्श स्थिति थी। राधाकृष्णन ने अपनी पुस्तक 'The present mission Faith' सह–अस्तित्व में सह–अस्तित्व के विषय में लिखा है।

संसार के दर्शन की मांग कर रहा है, ऐसा सह–अस्तित्व जो केवल निरपेक्ष व निष्क्रिय सह–अस्तित्व हो वरन् सक्रिय पारस्परिक शिक्षाप्रद सह–अस्तित्व हो।

समाज व धर्म दर्शन की दृष्टि से सह–अस्तित्व का अर्थ है– सभी वर्गो, जातियों, समुदायों, नस्लो, संस्कृतियों, धर्मों, पंचो का स्वतन्त्र और समान अस्तित्व इसमें एक वर्ग दूसरे वर्ग को नष्ट न करने का प्रयत्न करें, एक धर्म दूसरे धर्म का समादर को, प्रत्येक अपने ढंग से विकसित हों।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि हमारी चेतना, हमारी सभ्यता ने सौहार्दपूर्ण सह–अस्तित्व की अनिवार्यता को स्वीकार नहीं कर सकी है। संसार में फैले धार्मिक व जातीय दंगे, नस्लीय रंग भेद, अन्याय शोषण, अत्याचार, युद्ध, अकारण हस्तक्षेप हमारी दुर्बलताओं और दुरभिमानों को इंगित करते हैं। वर्तमान में विभिन्न देशों में छिड़ा युद्ध, सीमाओं पर बढ़ता सुरक्षा व्यय, धार्मिक मेलजोल का अभाव सह–अस्तित्व को प्राप्त करने में बाधक है। अन्तर्राष्ट्रीय युद्धों में कमी आयी है किन्तु अन्तः राष्ट्रीय संघर्ष में प्रत्यक्ष व परोक्ष समर्थन व शेष एक तिहाई मौन रहते हैं। एतदर्थ हमें संवादहीनता हटानी होगी, अहंकेन्द्रित आत्मव्याधा छोड़नी होगी, अनुचित अधिकार भावना रोकनी होगी, शोषण–दमन–संघर्ष के विरुद्ध सक्रिय लड़ाई छेड़नी होगी।

सन्दर्भ

1. डॉ0 राधाकृष्णन, The Present Mission Faith पेज नं0–82
2. डॉ0 के0के0 पाठक, सामाजिक एवं राजनीतिक दर्शन, पेज नं0–599
3. कार्ल मार्क्स, दर्शन की निर्धनता, पेज नं0–32
4. डॉ0 राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन, पेज नं0–42
5. विनोवा भावे, Thoughts on Education, पेज नं0–86
6. महात्मा गाँधी, My Experiment with truth पेज नं0–97
7. जवाहर लाल नेहरू, डिस्कवरी आफ इण्डिया, पेज नं0–166
8. ओपी गाबा, राजनीति दर्शन, पेज नं0–96
9. ऋग्वेद प्रथमं मण्डलम् सूक्त नं0–13
10. जेपी नारायण नेशन बिल्डिंग इंडिया, पेजन नं0–76